

A CRISIS OF MORALITY: MONEY POWER, MUSCLE POWER, AND INDIAN ELECTIONS

नैतिकता का संकट: धनबल, बाहुबल और भारतीय चुनाव



Puran Mal Meena ¹✉

¹ M.A., M.Phil., Associate Professor and Head, Department of Political Science, Government College, Rajgarh, Alwar, Rajasthan, India



DOI: <https://doi.org/10.29121/granthaalayah.v8.i12.2020.6890>

Article Type: Research Article

Article Citation: Puran Mal Meena. (2020). A CRISIS OF MORALITY: MONEY POWER, MUSCLE POWER, AND INDIAN ELECTIONS.

International Journal of Research - GRANTHAALAYAH, 9(1), 333-336. DOI:

<https://doi.org/10.29121/granthaalayah.v8.i12.2020.6890>

Received Date: 23 November 2020

Accepted Date: 31 December 2020

Keywords:

धनबल ए बाहुबल ए
चुनावी अपराधीकरण ए
नैतिक संकट ए
इलेक्टोरल बॉन्ड्स
ADR रिपोर्ट ए
फेक न्यूज ए
चुनाव सुधार ए
लोकतंत्र ए
मॉडल कोड ऑफ कंडक्ट

ABSTRACT

English: One of the biggest challenges facing Indian democracy is the crisis of money power, muscle power, and morality in the electoral process. This research paper presents an in-depth analysis of electoral history from independence to December 2020, using the latest available data (ADR report) from the 2019 Lok Sabha elections.

According to the Association for Democratic Reforms (ADR), 233 (43%) of the 539 newly elected MPs in 2019 have criminal cases registered against them, including 159 (29%) for serious offenses. This figure has risen from 23% in 2004 to 43% in 2019. Furthermore, a significant number of cases of crimes against women were found among MPs. The 2019 Lok Sabha elections proved to be the most expensive ever in terms of financial power. The Centre for Media Studies (CMS) estimates that the total expenditure reached approximately ₹55,000 to ₹60,000 crore. The Electoral Bonds Scheme (2018) marked the first step towards institutionalizing this exchange. The form of muscle power has evolved from the booth capturing of the 1980s and 90s to today's "candidate-criminal" narrative. The ethical

crisis is evident in fake news, voter buying, Model Code of Conduct violations, and concealment of candidates' backgrounds. The research paper cites key Supreme Court judgments (Public Interest Foundation, 2018; Rambabu Singh Thakur, 2020) and suggests reforms such as disqualification on charge sheets in serious criminal cases, strict monitoring of election expenditure, state funding of elections, and misinformation control on digital platforms. The study argues that if money and muscle power are not curbed, the roots of democracy will weaken. The proposed reforms will make the electoral process more transparent, inclusive, and ethical. The research is based on primary (ADR, ECI data, Supreme Court judgments) and secondary sources and provides practical insights for policymakers, scholars, and civil society.

Hindi: भारतीय लोकतंत्र की सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक है चुनावी प्रक्रिया में धनबल, बाहुबल और नैतिकता का संकट। यह शोध पत्र स्वतंत्रता के बाद से दिसंबर 2020 तक के चुनावी इतिहास का गहन विश्लेषण प्रस्तुत करता है, जिसमें 2019 लोकसभा चुनावों के नवीनतम उपलब्ध आंकड़ों (ADR रिपोर्ट) का उपयोग किया गया है।

एसोसिएशन फॉर डेमोक्रेटिक रिफॉर्म्स (ADR) के अनुसार, 2019 के 539 नवनिर्वाचित सांसदों में से 233 (43%) पर आपराधिक मामले दर्ज हैं, जिनमें 159 (29%) गंभीर अपराध शामिल हैं। यह आंकड़ा 2004 के 23% से बढ़कर 2019 में 43% हो गया है। साथ ही, महिलाओं के खिलाफ अपराधों के मामले भी सांसदों में उल्लेखनीय संख्या में पाए गए। धनबल की दृष्टि से 2019 के लोकसभा चुनाव अब तक के सबसे महंगे साबित हुए। सेंटर फॉर मीडिया स्टडीज (CMS) के अनुमान के मुताबिक कुल व्यय लगभग 55,000 से 60,000 करोड़ रुपये पहुंच गया। इलेक्टोरल बॉन्ड्स योजना (2018) ने 'आदान-प्रदान' को संस्थागत बनाने की दिशा में पहला कदम उठाया। बाहुबल का रूप 1980-90 के दशक के बूथ कैप्चरिंग से आज के 'कैंडिडेट-क्रिमिनल' तक विकसित हो चुका है। नैतिकता का संकट फेक न्यूज, वोट खरीद, मॉडल कोड ऑफ कंडक्ट उल्लंघनों और उम्मीदवारों की पृष्ठभूमि छिपाने में दिखता है। शोध पत्र सुप्रीम कोर्ट के प्रमुख फैसलों (Public Interest Foundation, 2018; रामबाबू सिंह ठाकुर, 2020) का उल्लेख करते हुए सुधार सुझाता है - जैसे गंभीर आपराधिक मामलों में चार्जशीट पर अयोग्यता, चुनावी व्यय की सख्त निगरानी, राज्य वित्त पोषण (State Funding of Elections) और डिजिटल प्लेटफॉर्म पर मिसइनफॉर्मेशन कंट्रोल। यह अध्ययन तर्क देता है कि यदि धन-बाहुबल और नैतिक संकट को नहीं रोका गया तो लोकतंत्र की जड़ें कमजोर हो जाएंगी। प्रस्तावित सुधारों से चुनाव प्रक्रिया अधिक पारदर्शी, समावेशी और नैतिक बनेगी। शोध प्राथमिक (ADR, ECI डेटा, सुप्रीम कोर्ट जजमेंट्स) और

1. प्रस्तावना

भारतीय चुनावों में धनबल, बाहुबल और नैतिकता का संकट आजादी के बाद से लगातार गहराता गया है। स्वतंत्र भारत के प्रारंभिक दशकों में, जब लोकतंत्र अभी अपनी जड़ें मजबूत कर रहा था, चुनाव अपेक्षाकृत सरल, कम खर्चीले और अधिकतर शांतिपूर्ण होते थे। 1952 के पहले आम चुनाव में मतदाताओं की संख्या सीमित थी, प्रचार मुख्यतः सभाओं, रैलियों और मुंह-जुबानी बातचीत तक सीमित था, तथा उम्मीदवारों द्वारा खर्च की गई राशि आज के मुकाबले नगण्य थी। उस समय राजनीति में आदर्शवाद की झलक मिलती थी और मतदाता उम्मीदवार के चरित्र, विचारधारा तथा सेवा भावना को प्राथमिकता देते थे। लेकिन 1970-80 के दशक से इस स्वच्छ छवि में दरारें पड़ने लगीं। आपातकाल (1975-77) के बाद राजनीतिक दलों ने सत्ता बनाए रखने के लिए गुंडों और स्थानीय प्रभावशाली तत्वों का सहारा लेना शुरू कर दिया। बूथ कैप्चरिंग इस काल की सबसे कुख्यात घटना बन गई, जिसमें सशस्त्र गुंडे मतदान केंद्रों पर कब्जा कर लेते, मतपेटियों को भर देते या मतदाताओं को डराकर भाग जाते। बिहार, उत्तर प्रदेश, बंगाल और आंध्र प्रदेश जैसे राज्यों में यह प्रथा लगभग संस्थागत हो गई। 1980-90 के दशक में वोट खरीद, नकली मतदान और खुली गुंडागर्दी ने लोकतंत्र की नींव हिला दी। आम मतदाता अब अपनी इच्छा से वोट देने के बजाय डर, धमकी या पैसे के लालच में फंसने लगा।

1990 के दशक में आर्थिक उदारीकरण ने धनबल को नया, अधिक परिष्कृत और शक्तिशाली रूप प्रदान किया। बाजार खुलने के साथ कंपनियों और धनी व्यक्तियों की राजनीतिक दलों के प्रति निर्भरता बढ़ी। चुनावी खर्च में भारी वृद्धि हुई – हेलीकॉप्टरों, बड़े-बड़े प्रचार अभियानों, मीडिया मैनेजमेंट और सोशल मीडिया कैम्पेन की शुरुआत हुई। धनबल अब केवल नकद वितरण तक सीमित नहीं रहा; यह चुनावी बॉन्ड्स, अप्रत्यक्ष फंडिंग, कॉर्पोरेट चंदों और 'आदान-प्रदान' के सूक्ष्म रूपों में बदल गया।

इसी काल में बाहुबल भी 'कैंडिडेट-क्रिमिनल' के रूप में पूरी तरह संस्थागत हो गया। जिन व्यक्तियों पर हत्या, बलात्कार, अपहरण, भ्रष्टाचार या अन्य गंभीर अपराधों के मामले दर्ज थे, उन्हें पार्टियां टिकट देने लगीं क्योंकि वे 'विनिंग कैंडिडेट' साबित होते थे। उनकी 'मसल पावर' बूथों पर नियंत्रण, विरोधियों को डराने और वोट बैंक को मजबूत करने में काम आती थी। एसोसिएशन फॉर डेमोक्रेटिक रिफॉर्म (ADR) के आंकड़ों के अनुसार, यह प्रवृत्ति 2004 से लगातार बढ़ रही है – 2004 में 23% सांसदों पर अपराधिक मामले थे, जो 2019 में 43% पहुंच गए।

आज 2019 के चुनावों में यह त्रयी – धनबल, बाहुबल और नैतिकता का संकट – इतनी गहरी जड़ें जमा चुकी है कि मतदाता अक्सर 'कम बुराई' (lesser evil) चुनने को मजबूर हो जाते हैं। वे उन उम्मीदवारों को वोट देते हैं जिनके बारे में वे जानते हैं कि वे अपराधी पृष्ठभूमि वाले हैं, लेकिन दूसरे विकल्प और भी खराब लगते हैं। फेक न्यूज, पेड मीडिया, व्हाट्सएप फॉरवर्ड्स और टारगेटेड मिसइनफॉर्मेशन ने नैतिकता को और कमजोर कर दिया है। मतदाता अब उम्मीदवार के चरित्र के बजाय उसके विकास कार्यों, जाति, धर्म या पार्टी ब्रांड को देखते हैं।

यह संकट केवल चुनावी प्रक्रिया तक सीमित नहीं है; यह पूरे लोकतांत्रिक ढांचे को खोखला कर रहा है। जब अपराधी और धनवान व्यक्ति विधानसभाओं और संसद में प्रवेश करते हैं, तो कानून-व्यवस्था, नीति-निर्माण और जन-कल्याण प्रभावित होते हैं। सुप्रीम कोर्ट ने कई फैसलों में चिंता जताई है, लेकिन कानूनी और राजनीतिक इच्छाशक्ति की कमी ने समस्या को ज्यों का त्यों बरकरार रखा है।

2. उद्देश्य

- 1) भारतीय चुनावों में धनबल, बाहुबल और नैतिक संकट के ऐतिहासिक विकास का विश्लेषण करना।
- 2) ADR, ECI और CMS के नवीनतम आंकड़ों (2019 तक) के आधार पर वर्तमान स्थिति का मूल्यांकन करना।
- 3) इन समस्याओं के लोकतंत्र, समावेशिता और जन-विश्वास पर प्रभाव का अध्ययन करना।
- 4) सुप्रीम कोर्ट के फैसलों और अंतरराष्ट्रीय मॉडलों की तुलना में व्यावहारिक सुधार सुझाना।
- 5) मूल सिफारिशें प्रस्तुत करना जो नीति-स्तर पर लागू किए जा सकें।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि: स्वतंत्रता के बाद प्रथम आम चुनाव (1952) में चुनावी प्रक्रिया अपेक्षाकृत शांतिपूर्ण और आदर्शवादी थी। मतदान प्रतिशत कम था, लेकिन लोकतंत्र की नींव मजबूत दिख रही थी। 1960-70 के दशक में राजनीतिक दलों ने स्थानीय प्रभाव और गुंडों का सहारा लेना शुरू कर दिया। 1975 के आपातकाल के बाद बूथ कैप्चरिंग सामान्य हो गया। 1980-90 के दशक में बिहार, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल जैसे राज्यों में बूथ कैप्चरिंग, नकली मतदान और खुली हिंसा की घटनाएं आम हो गईं। इस काल में लोकतंत्र की छवि गंभीर रूप से क्षतिग्रस्त हुई।

1990 के दशक में Vohra Committee (1993) ने राजनीति, अपराध और भ्रष्टाचार के गठजोड़ की चेतावनी दी। समिति की रिपोर्ट में साफ कहा गया कि अपराधी तत्व राजनीतिक दलों के अंदर घुस चुके हैं और चुनावी प्रक्रिया को प्रभावित कर रहे हैं। लेकिन रिपोर्ट के सिफारिशों पर कोई ठोस कार्रवाई नहीं हुई। 1991 के आर्थिक उदारीकरण ने धनबल को नया आयाम दिया। कंपनियों और औद्योगिक घरानों ने राजनीतिक चंदे बढ़ाए, जिससे चुनावी खर्च में भारी वृद्धि हुई। 2000 के दशक में EVM मशीनों के आगमन के बावजूद बाहुबल जारी रहा। 2010 के बाद सोशल मीडिया ने फेक न्यूज और मिसइनफॉर्मेशन को नया हथियार दे दिया। 2018 में केंद्र सरकार द्वारा शुरू की गई इलेक्टोरल बॉन्ड्स योजना ने धनबल को कानूनी लेकिन अत्यधिक गोपनीय रूप प्रदान किया। इस योजना के तहत कंपनियां और व्यक्ति बिना अपनी पहचान उजागर किए राजनीतिक दलों को चंदा

दे सकते हैं। इसने 'आदान-प्रदान' की आशंकाओं को और बढ़ा दिया। 2019 लोकसभा चुनावों तक यह योजना सक्रिय थी और चुनावी फंडिंग की अपारदर्शिता को बढ़ावा दे रही थी।

इस पूरे विकासक्रम में धनबल और बाहुबल एक-दूसरे को मजबूत करते गए, जबकि नैतिकता का हास निरंतर होता रहा। Vohra Committee से लेकर 2019 तक के ADR रिपोर्ट्स इस प्रवृत्ति की पुष्टि करते हैं। आज स्थिति यह है कि बिना धन और बाहुबल के चुनाव लड़ना लगभग असंभव हो गया है, जो भारतीय लोकतंत्र के लिए गंभीर चिंता का विषय है।

धनबल का विश्लेषण- 2019 लोकसभा चुनाव भारत के स्वतंत्र इतिहास के सबसे महंगे चुनाव साबित हुए। सेंटर फॉर मीडिया स्टडीज (CMS) के अनुमान के अनुसार कुल व्यय 55,000 से 60,000 करोड़ रुपये तक पहुंच गया, जो 2014 के मुकाबले दोगुने से भी अधिक है। इस खर्च में राजनीतिक दलों द्वारा की गई आधिकारिक रिपोर्टिंग, उम्मीदवारों का व्यक्तिगत व्यय, मीडिया अभियान, रैलियां, हेलीकॉप्टर-चार्टर, वोटर आउटरीच, गिफ्ट्स और अप्रत्यक्ष खर्च सभी शामिल हैं।

ADR रिपोर्ट के मुताबिक, राष्ट्रीय और क्षेत्रीय दलों द्वारा जुटाए गए संसाधनों में बड़ी असमानता थी। उम्मीदवारों द्वारा चुनाव आयोग को जो खर्च दिखाया गया, उसका औसत सीमा के आसपास था, लेकिन वास्तविक व्यय कई गुना अधिक माना जाता है। कई अध्ययनों में पाया गया है कि वास्तविक खर्च घोषित राशि का 5 से 10 गुना तक हो सकता है, क्योंकि नकद वितरण, वोटर खरीद और छिपे हुए प्रचार को रिपोर्ट नहीं किया जाता।

इलेक्टरल बॉन्ड्स- योजना (2018) ने धनबल को नया, कानूनी लेकिन अपारदर्शी रूप प्रदान किया। यह योजना राजनीतिक चंदे को गोपनीय बनाती है, जिससे 'आदान-प्रदान' (quid pro quo) की आशंका बढ़ गई है। चुनावी खर्च पर कोई सख्त सीमा न होने और निगरानी की कमी के कारण असमानता बढ़ गई। बड़े दल और धनी उम्मीदवार विशाल प्रचार अभियान चला सकते हैं, जबकि छोटे दल और स्वतंत्र उम्मीदवार इस दौड़ में पीछे छूट जाते हैं। इससे लोकतंत्र की मूल भावना – समान अवसर – प्रभावित होती है।

बाहुबल का विश्लेषण- ADR की 2019 लोकसभा चुनाव रिपोर्ट के अनुसार, 539 नवनिर्वाचित सांसदों में से 233 (43%) पर आपराधिक मामले दर्ज हैं। इनमें 159 (29%) गंभीर अपराधों (मर्डर, अटेम्प्ट टू मर्डर, बलात्कार, अपहरण आदि) के मामले हैं। यह आंकड़ा 2004 के 23% से लगातार बढ़ा है – 2009 में 30%, 2014 में 34% और 2019 में 43%। महिलाओं के खिलाफ अपराधों के मामले भी सांसदों में उल्लेखनीय संख्या में पाए गए। यह आंकड़े स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि अपराधी पृष्ठभूमि वाले उम्मीदवारों की जीत की संभावना सामान्य उम्मीदवारों से कहीं अधिक होती है। कारण साफ है – उनकी 'बाहुबल' (मसल पावर) बूथों पर नियंत्रण, विरोधियों को दबाने और वोट बैंक को भय से जोड़ने में मदद करती है।

1980-90 के दशक में खुला बूथ कैप्चरिंग आज 'मनी-मसल' कॉम्बिनेशन में बदल चुका है। सुप्रीम कोर्ट ने Public Interest Foundation बनाम यूनिन ऑफ इंडिया (2018) मामले में उम्मीदवारों की आपराधिक पृष्ठभूमि को सार्वजनिक रूप से प्रकाशित करने का निर्देश दिया था, लेकिन चार्जशीट दाखिल होने पर स्वतः अयोग्यता का प्रावधान अभी भी लागू नहीं हो सका। रामबाबू सिंह ठाकुर (2020) मामले में भी कोर्ट ने चिंता जताई, पर राजनीतिक इच्छाशक्ति की कमी ने सुधार को रोक रखा है।

नैतिकता का संकट - नैतिकता का हास भारतीय चुनावों की सबसे गहरी और सबसे खतरनाक समस्या है। यह फेक न्यूज, पेड न्यूज, वोटर खरीद, मॉडल कोड ऑफ कंडक्ट के उल्लंघनों, उम्मीदवारों द्वारा अपनी पृष्ठभूमि छिपाने और पार्टियों द्वारा अपराधियों को टिकट देने में स्पष्ट दिखता है। 2019 के चुनावों में सोशल मीडिया (व्हाट्सएप, फेसबुक, ट्विटर) पर मिसइनफॉर्मेशन ने मतदाताओं को प्रभावित किया। धार्मिक ध्रुवीकरण, जातीय भावनाएं भड़काने वाले मैसेज और झूठी खबरें लाखों मतदाताओं तक पहुंचीं। पेड न्यूज की प्रथा जारी रही, जिसमें मीडिया घराने राजनीतिक दलों से पैसा लेकर पक्षपाती कवरेज करते हैं। उम्मीदवार अपने हलफनामों में आपराधिक मामले छिपाने या कम करके दिखाने की कोशिश करते हैं। पार्टियां जानबूझकर ऐसे उम्मीदवारों को टिकट देती हैं जिनकी 'विनेबिलिटी' अधिक होती है, भले ही उनका नैतिक चरित्र संदिग्ध हो। मतदाता अक्सर NOTA का विकल्प चुनते हैं, लेकिन यह कोई स्थायी समाधान नहीं है। इस संकट का सबसे बड़ा परिणाम है – मतदाता विश्वास का हास। जब आम नागरिक देखता है कि संसद और विधानसभाएं अपराधियों और धनबलियों से भरी पड़ी हैं, तो लोकतंत्र के प्रति उसका भरोसा टूटता है। राजनीति अब सेवा का माध्यम नहीं, बल्कि सत्ता और धन कमाने का रास्ता बन गई है।

ये तीनों समस्याएं – धनबल, बाहुबल और नैतिक संकट – एक-दूसरे को पोषित करती हैं। धन से बाहुबल खरीदा जाता है, बाहुबल से चुनाव जीता जाता है और नैतिकता की कमी पूरे सिस्टम को खोखला बनाती है। यदि समय रहते इन पर अंकुश नहीं लगाया गया, तो भारतीय लोकतंत्र की जड़ें कमजोर हो जाएंगी।

3. केस स्टडीज

- 1) 2019 लोकसभा: ADR डेटा से BJP, Congress आदि दलों में क्रिमिनल कैडिडेट्स।
- 2) बिहार-यूपी के पुराने चुनाव: बूथ कैप्चरिंग।
- 3) इलेक्टरल बॉन्ड्स योजना (2018): शुरुआती विवाद।

तुलनात्मक विश्लेषण: अमेरिका और यूके में सख्त कैम्पेन फाइनेंस लॉ हैं। भारत में स्टेट फंडिंग और स्वतंत्र चुनाव आयोग की मजबूती जरूरी है।

4. सुधार के सुझाव

- 1) गंभीर अपराधों में चार्जशीट पर अयोग्यता।
- 2) चुनावी व्यय की रीयल-टाइम निगरानी।
- 3) स्टेट फंडिंग ऑफ इलेक्शंस।

- 4) डिजिटल प्लेटफॉर्म पर मिसइनफॉर्मेशन नियंत्रण।
- 5) स्वतंत्र 'Election Integrity Commission'।

5. निष्कर्ष

धनबल, बाहुबल और नैतिक संकट भारतीय लोकतंत्र को कमजोर कर रहे हैं। 2019 के आंकड़े चेतावनी हैं। यदि संसद और चुनाव आयोग समय रहते सुधार नहीं लाए तो मतदाता विश्वास टूट जाएगा। प्रस्तावित सुधारों से चुनाव प्रक्रिया स्वच्छ बनेगी और सच्चा जन-प्रतिनिधित्व सुनिश्चित होगा। यह शोध भविष्य के अध्ययनों और नीति-निर्माण के लिए आधार प्रदान करता है।

SOURCES OF FUNDING

This research received no specific grant from any funding agency in the public, commercial, or not-for-profit sectors.

CONFLICT OF INTEREST

The author have declared that no competing interests exist.

ACKNOWLEDGMENT

None.

REFERENCES

- [1] Association for Democratic Reforms (ADR), "Lok Sabha Elections 2019: Analysis of Criminal Background of Winners", 2019.
- [2] Supreme Court of India, Public Interest Foundation v. Union of India, (2019) 3 SCC 224.
- [3] Supreme Court of India, Rambabu Singh Thakur v. Sunil Arora, 2020.
- [4] Centre for Media Studies (CMS), "Poll Expenditure: The 2019 Elections", 2019.
- [5] Election Commission of India, Expenditure Reports 2019.
- [6] Vohra Committee Report on Criminalisation of Politics, 1993.
- [7] The Hindu, "43% Newly Elected MPs Face Criminal Cases: ADR", May 2019.
- [8] ADR Reports on Sitting MPs (2014-2019).